IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

भारतीय स्वदेशी आन्दोलन व बंग–भंग आंदोलन में गांधी–युगीन महिलाओं की भूमिका : एक अध्ययन

Dr. Sadhana Signh
(Ph.D. Political Science)
Assistant Professor (vsy),
Govt. Girls College, Rudawal (Bharatpur) Raj.

प्रस्तावाना :

सन् 1918 में भारतीय राजनैतिक मंच पर महात्मा गांधी के प्रवेश के साथ स्वतंत्रता–संग्राम का आगे का सारा इतिहास बदल जाता है। यही से कांग्रेस द्वारा लड़ी जा रही लड़ाई जन–जन की भागीदारी लेकर जन–विद्रोह में परिणत हो गई। दक्षिण अफ्रीका में कस्तूरबा हठपूर्वक सत्याग्रह में शामिल हुई। इसके बाद महिलाओं के दूसरे जत्थे का नेतृत्व भी कस्तूरबा ने ही संभाला। गाँधीजी को भी वहीं से अहसास हुआ कि देश की आधी शक्ति (स्त्रियों) को साथ लिए बिना भारत की आजादी का सपना पूरा नहीं होगा। कालांतर में गाँधीजी के आव्हान पर भारत की हजारों पढ़ी–बेपढ़ी स्त्रियों, जिन्होंने इसके पूर्व कभी घर की देहरी नहीं लांघी थी, ने पुरूषों के कंधे से कंधा मिलाकर भारत की आजादी के लिए संघर्ष किया।

Keywords : भारतीय राजनीति, गांधी–युग, आन्दोलन, महिलाएं।

प्रारंभ से ही अंग्रेजों को बंगाल में विरोध का सामना करना पड़ा था। इस बीच की अवधि में तिलक के गरम दल की आवाज से बंगाल के कुछ पत्रों ने भी अंग्रेजों के खिलाफ वातावरण काफी गरम कर दिया था। फिर भी, प्रशासनिक सुविधा के नामपर अंग्रेजों ने बंगाल के विभाजन का निर्णय ले लिया। लार्ड कर्जन ने जुलाई 1905 में बंग–भंग की अपनी योजना प्रकाशित करा दी। इसके साथ ही सारे बंगाल में विरोध उठ खड़ा हुआ। बंग–भंग विरोधी आंदोलन बंगाल की सीमाओं को पार कर एक राष्ट्रीय प्रश्न बन गया। इस आंदोलन को सारे राष्ट्र से समर्थन मिल रहा था।

16 अक्टूबर 1905 को विभाजित बंगाल के नए प्रांत का उद्घाटन होने वाला था। बंग–भंग विरोधी नेताओं ने उक्त दिवस को **'राष्ट्रीय शोक दिवस'** मनाने की सार्वजनिक घोषणा कर दी। कार्यक्रम था–घरों के चूल्हे ठंडे रहेंगे, सिर्फ अपंगों व बीमारी के लिए खाना बनेगा। सारा कारोबार बंद रखा जायेगा। लोग नंगे पैर चलेंगे। प्रातः गंगा स्नान करेंगे, व्रत रखेंगे और प्रतिज्ञा लेंगे कि बंग–भंग आदेश रद्द करवा कर ही चैन लेंगे और तब तक विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार जारी रखेंगे। नदी–घाटी पर नर–नारियों की अपार भीड़ जुटी। पुरूषों में उत्साह जगाने के लिए महिलाएं उन्हें राखी बांध रही थीं। 'वंदे मातरम्' की ध्वनि सड़कों व बाजारों में गूंज रही थीं। आंदोलन की सफलता के लिए एक राष्ट्रीय कोष की स्थापना की गई और छोटे चंदों से ही कुछ घंटों में दस हजार रूपये एकत्रित कर लिए गए।

सरकार ने आंदोलन की तीव्रता देखकर सड़कों पर 'वंदे मातरम्' के घोष की मनाही कर दी। जुलूसों पर लाठियां बरसने लगीं। सुरेन्द्र बनर्जी सहित कई बड़े नेता गिरफ्तार कर लिए गए। परंतु इससे आंदोलन रूका नहीं, उल्टे जनता पर विपरीत प्रभाव पड़ा। गिरफ्तारियों के बाद भी कांफ्रेंस चलती रही और इसके बाद लौटते हुए लोग सड़कों पर जोर–जोर से 'वंदे मातरम्' के नारे लगाने लगे।

भारत में स्वदेशी आंदोलन ने जोर पकड़ा बंग–भंग आंदोलन के समय, किंतु इसका विचार सबसे पहले पूना के गोपाल राव देशमुख के मन में उठा था, जिन्हें लोकहितवादी के नाम से पुकारा जाता था। उन्होंने 1840–50 के दशक में ही भारतीय ग्रामीण उद्योगों के संरक्षण के लिए स्वदेशी का प्रचार प्रारंभ किया था। 1870–80 के दशक के प्रारंभ में महादेव गोविंद रानाडे ने अपने व्याख्यानों व लेखों द्वारा स्वदेशी का प्रचार किया, जिसे समाज में फैलाने का काम किया उनकी पत्नी रमाबाई रानाडे व उनके सहयोगियों ने। उन दिनों कई लोगों ने स्वदेशी का व्रत लिया और स्वदेशी वस्तुओं की दुकानें भी खोली। सार्वजनिक सभा के एक प्रतिनिधि गणेश वासुदेव जोशी जब 1877 के दिल्ली दरबार में गए, तो पहली बार उन्होंने अपने खादी के वस्त्रों से सबका ध्यान आकर्षित किया था। उन्हीं दिनों अहमदाबाद में भी कुछ स्वदेशी प्रेमी लोगों ने मिलकर 'स्वदेशी उद्यम वर्धक मंडल' की स्थापना की थी। बाल गंगाधर तिलक भी अपने 'केसरी पत्र' के माध्यम से ब्रितानी शोषण की आलोचना के साथ स्वदेशी के प्रचार और विदेशी वस्तुओं के बहिष्कार के पक्ष में वातावरण बना रहे थे। फिर 1903 में अहमदाबाद में 'स्वदेशी वस्तु रक्षा समिति' की स्थापना के साथ तो स्वदेशी आंदोलन की भी जैसे शुरूआत कर दी गई थी।

स्वदेशी आंदोलन को राजनैतिक आंदोलन का अंग सबसे पहले बंग–भंग विरोधी आंदोलन काल में ही बनाया गया, जिसका सूत्रपात एक पंजाबी आर्यसमाजी टहलराम गंगाराम ने किया। एक सार्वजनिक सभा में विधिवत प्रस्ताव पास कर लोगों से अपील की गई कि जब तब बंग–भंग रद्द न किया जाए, ब्रिटेन व विदेशी की बनी सभी वस्तुओं का बहिष्कार करें। अरविंद घोष ने विदेशी वस्तु बहिष्कार–आंदोलन को लोगों की धार्मिक भावना से भी जोड़ दिया। 28 अगस्त 1905 को एक धार्मिक उत्सव में पचास हजार व्यक्तियों ने काली माता के सामने शपथ ली कि वे विदेशी वस्तुओं को नहीं खरीदेंगे। दुर्गा–पूजा उत्सव पर बड़े पैमाने पर विदेशी वस्तुओं की बिक्री होती थी, परंतु उन दुकानों पर भी सन्नाटा छा गया। कपड़े ही नहीं, चीनी, चावल, प्याले, जूते, साबुन, चूड़ियां, सिगरेट आदि सारी विदेशी वस्तुएं गोदामों में पड़ी रह गईं। जो उन्हें खरीदता या धारण करता, उन्हें लांछित किया जाता। विद्यार्थियों ने विदेशी कागज की उत्तर–पुस्तिकाएं तक लौटा दीं और देशी कापियों पर ही परीक्षा दीं। छोटे–छोटे बच्चों तक ने विदेशी खिलौने लेने और विदेशी दवा पीने से इन्कार कर दिया। स्कूलों–कालेजों की सरकारी सहायता बंद करने की सरकारी धमकियां भी व्यर्थ हो गई। एक कालेज के तीन सौ विद्यार्थियों को विद्यालय से निष्कासन का आदेश मिला। विद्यालयों की मान्यता वापस ले ली गई। विरोध में लेफ्टिनेंट गवर्नर (जो लार्ड कर्जन का अपना आदमी था) तक को त्यागपत्र देना पड़ा।

बंगाल से स्वदेशी तथा बहिष्कार आंदोलन देश के अन्य भागों में भी तेजी से फैल गया। महाराष्ट्र में पहले से वातावरण इसके अनुकूल था। महाराष्ट्र के सभी पत्रों ने समर्थन दिया और आंदोलन पूरे समाज में फैलने लगा। तिलक ने बम्बई प्रांत व देश के दूसरे भागों का तूफानी दौरा कर जगह–जगह लोगों को बताया कि स्वदेशी आंदोलन बंग–भंग का ही परिणाम नहीं है, यह अंग्रेजों द्वारा लंबे समय से भारत के शोषण का एक उत्तर है, जो बंग–भंग के बाद भी अंग्रेजों के भारत से जाने तक जारी रहना चाहिए। बंबई, मध्य प्रांत, पंजाब और कुछ देशी रियासतों में इसके स्पष्ट परिणाम दिखाई देने लगे। पूना में विजयदशमी उत्सव विदेशी वस्तुओं की होली जलाकर मनाया गया। इसमें महिलाओं और विद्यार्थियों की भारी संख्या सहित लगभग पांच हजार लोग थे, स्वदेशी प्रदर्शनियाँ आयोजित की गई, स्वदेशी समर्थक नाटक खेले गए और इस प्रचार के लिए कोष एकत्रित किए गए।

विपिन चन्द्र पाल ने अपने व्याख्यानों से मद्रास में भी आग भड़का दी। इसके बाद ही वहां उपद्रव हो गया। सरकारी कर्मचारियों पर उनके प्रभावों को देखकर विपिन चंद्र पाल को 'खतरनाक आचरण' के लिए मुकद्दमा चलाने के बजाय देश निकाला दे दिया गया, ताकि जनता भड़क न उठे। पर इस सबसे और जगह–जगह दमन–कार्यवाहियों से भी आंदोलन नहीं रूका। इस स्वदेशी आंदोलन ने ब्रिटिश सरकार की जड़ें हिला दीं। ब्रिटेन में शासन बदल चुका था। नए वायसराय लार्ड मिंटो शांति की स्थापना के उद्देश्य से भारत आए थे, पर भूतपूर्व वायसराय लार्ड कर्जन की नीतियों के कारण उन्हें भारी विरोध का सामना करना पड़ा। आंदोलन की तीव्रता व जनता का जोश, जिसमें तिलक को 'द्वितीय शिवाजी' घोषित किया गया और बंगाल में सुरेंद्रनाथ बनर्जी 'बंगाल के बादशाह' कहलाने लगे। अतः यह देखकर भारतीय नेताओं का आदर अंग्रेजी शासकों की नजरों में भी बढ़ गया, इसी से 1909 के 'मिंटो–माले सुधार' की पृष्ठभूमि बनी।

इस आंदोलन में महिलाओं की विशेष भूमिका रही। बंगाल, महाराष्ट्र और पंजाब की महिलाएं अधिक ही सक्रिय थीं। उन दिनों घोर अशिक्षा के कारण महिलाओं में विशेष जागृति नहीं थी। फिर भी इस अवसर से वे पीछे नहीं रही। गांव–गांव के घर–घर में महिलाएं चरखा चलाती ही थीं, अब उनका प्रचार जोरों से होने लगा। राष्ट्रीय फंड में पैसा और आभूषण दान दिया जाने लगा। घर–घर मुट्ठी भर अनाज के रूप में भी आंदोलन फंड जमा हो रहा था। मुर्शिदाबाद जिले के बोनोकंद गांव में स्वदेशी प्रचार के लिए 500 महिलाओं की सभा हुई, जिसमें कई स्त्रियों ने आभूषण दिए। प्रांतीय सम्मेलन में तारा प्रसन्न बोस की पत्नी सरोजनी बोस व श्रीमती गांगुली ने स्वराज्य तक आभूषण न पहनने की शपथ ली। क्रिस्टो मित्तर की लड़की कुमारी कुमुदिनी मित्तर इस अवधि में बहुत सक्रिय रहीं। नोआखाली की भगवती ने काली का आव्हान करते हुए राष्ट्रीय गान लिखे।

सियालकोट (पंजाब) की सुशीला देवी जगह–जगह भाषण देकर चेतना जगा रही थी। लाहौर के बैरिस्टर रोशन लाल की पत्नी हर देवी हिंदी पत्रिका 'भारत भगिनी' का संपादन कर रही थीं–उन्होंने सभाओं के आयोजन, फंड–एकत्रण, समाज–सुधार व राजनैतिक कैदियों की मदद के लिए अभियान जारी रखा। आर्य समाज की सदस्याओं में हिसार की अग्रणी पूरन देवी स्वदेशी प्रचार के लिए हर जिले का दौरा कर रही थीं। जगह–जगह वे लोगों को हिन्दू–मुस्लिम एकता, अस्पृश्यता–निवारण के लिए तथा बच्चों को अंग्रेजी स्कूलों में और युवकों को सरकारी नौकरियों में न भेजने के लिए तैयार कर रही थीं। कूका नेत्री हुक्मी भी लुधियाना व मलेरकोटला क्षेत्रों में सक्रिय थी। दिल्ली की आज्ञावती और वेद कुमारी महिला सभाओं से आगे बढ़कर पुरूषों की सभाओं में भी भाषण कर रही थी। स्वर्ण कुमारी देवी की लड़की सरला देवी चौधरी बंगाल से पंजाब में जाकर बंगाल और पंजाब के बीच संपर्क–सेतु तो बनी ही थी, तिलक के भी सीधे संपर्क में थी और महाराष्ट्रीय महिलाओं के स्वदेशी आंदोलन को बल प्रदान कर रही थी। उन्होंने जगह–जगह 'लक्ष्मी भंडार' खोलकर स्वदेशी आंदोलन को लोकप्रिय बनाया। साथ ही बंगाल और पंजाब से बाहर जगह–जगह दौरा कर इस आंदोलन को राष्ट्रीय आंदोलन का रूप देने में सहायक हुई।

गुजरात और महाराष्ट्र में स्वदेशी आंदोलन के विवरणबंग–भंग आंदोलन के पूर्व भी मिलते हैं। गुजरात में महिलाएं शायद गाँधीजी के आगमन के बाद उनके आव्हान पर बाहर आईं, कुछ वयोवद्ध महाराष्ट्रीय नेत्रियों द्वारा प्राप्त जानकारी के अनुसार शांता तिलक, यमुनाबाई सावरकर, अवंतिकाबाई गोखले, ऐसूबाई सावरकर, बायाकर्वे, यशोदाबाई आगरकर, सत्यभामा तिलक आदि प्रसिद्ध नेत्रियां स्वदेशी आंदोलन में खूब सक्रिय थीं।

बंग–भंग आंदोलन में स्वदेशी आंदोलन, बहिष्कार–धरने, शांतिपूर्ण विरोधी जुलूस और क्रान्तिकारी गतिविधियां, साथ–साथ चलने वाले कार्यक्रम थे। क्रांतिकारी आंदोलन के इस प्रथम व द्वितीय दौर में यद्यपि भीकाजी कामा के अलावा क्रांति–नेतृव में अन्य नाम नहीं मिलते, लेकिन यत्र–तत्र क्रान्तिकारी गतिविधियों के सफल संचालन में उनकी अप्रत्यक्ष

भूमिका–उनके कागज–पत्र इधर–से–उधर पहुंचाना, हथियार पहुंचाना और छिपाना, उनके लिए शरण–स्थल और भोजन आदि जुटाने के साथ फंड एकत्र करना और समय पर हर स्थिति का सामना करने के लिए तैयार रहना है। कहीं–कहीं यह भूमिका बहुत जिम्मेदारीपूर्ण कार्यों और साहसी कृत्यों के रूप में भी रही।

अन्ततोगत्वा यह स्वीकार किया जा सकता है कि बंग–भंग आंदोलन के स्वदेशी आंदोलन से इतनी अधिक प्रवृत्तियां और शक्तियां विकसित हुई जिन्होंने स्वतंत्रता आंदोलन और उसके बाद तक भारतीय जन–जीवन को दूरगामी रूप से प्रभावित किया। इसीलिये महात्मा गांधी ने लिखा था कि ''भारत का वास्तविक जागरण बंगाल के विभाजन के उपरांत 'स्वदेशी आंदोलन' से प्रारम्भ हुआ था।' जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में उद्योगों, शिक्षा, संस्कृति, साहित्य और फैशन में स्वदेशी की भावना संचारित हुई।

सन्दर्भ

1. आशारानी व्होरा, 'महिलाएं और स्वराज्य' प्रकाशन सूचना विभाग और प्रसारण मंत्रालय भारत सरकार, पृष्ठ 211।
2. सत्यकेतु विद्यालंकार, 'भारत के राष्ट्रीय आन्दोलन का इतिहास' पृष्ठ 149।
3. आशारानी व्होरा, 'महिलाएं और स्वराज्य' पृष्ठ 218।
4. प्रमिला कल्हण, 'कमलानेहरू एक आत्मीय जीवन चरित्र' विकास पब्लिशिंग हाउस प्रा.लि., दिल्ली 1974।
5. राधाकुमार, 'स्त्री संघर्ष इतिहास' पृष्ठ 100–167।
6. 'स्त्री संघर्ष का इतिहास' पृष्ठ 163।
7. कमलादेवी चट्टोपाध्याय, 'इंटरव्यू' पूर्वोक्त, पृष्ठ 72, 73।
8. मानिक लाल गुप्त, 'आधुनिक भारत का इतिहास' पृष्ठ 311–312।
9. अयोध्या सिंह, 'भारत का मुक्तिसंग्राम' पृष्ठ 539, 540।
10. विश्वप्रकाश गुप्त व मोहिनी गुप्त, 'स्वतंत्रता–संग्राम और महिलाएं, पृष्ठ 257।
11. डॉ. लाल बहादुर सिंह चौहान, ' भारत की गरिमामयी नारियाँ' पृष्ठ 234, 236